चमन लाल
वी.
हिमाचल प्रदेश का राज्य
(2017 की आपराधिक अपील संख्या 1229)
3 दिसंबर, 2020
[अशोक भूषण, आर. सुभाष रेड्डी और एम. आर. शाह, जे. जे.]

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 - धारा 378, 313 - दोषमुक्त किए जाने के खिलाफ अपील - अपीलकर्ता-अभियुक्त के खिलाफ एफआईआर दर्ज की गई जिसमें आरोप लगाया गया कि जब पीड़िता बकरियों और मवेशियों को चराने के लिए जंगल जाती थी, तो अपीलकर्ता भी वहां आता था और उसके साथ जबरन यौन संबंध बनाता था - विचारण न्यायालय ने एफआईआर में देरी के आधार पर आईपीसी की धारा 376, 506 के तहत अपराध के लिए अपीलकर्ता को दोषमुक्त कर दिया और जैसा कि आरोप लगाया गया था, अभियोक्ता विक्षिप्त दिमाग की नहीं थी - उच्च न्यायालय द्वारा दोषमुक्त किए जाने को उलट दिया गया - माना गया: यह साबित हो गया है कि अभियोक्त्री मानसिक रूप से विक्षिप्त थी और वह यौन उत्पीड़न के अच्छे और बुरे पहलू को समझने की स्थिति में नहीं थी - अपीलकर्ता ने अभियोक्ता की मानसिक बीमारी और कम आईक्यू का फायदा उठाया - वह उसके द्वारा दिए गए बच्चे का जैविक पिता है - अपने में धारा 313 सीआरपीसी के बयान में, अपीलकर्ता का मामला पूरी तरह से इनकार का था - उसका मामला कभी नहीं था कि यह सहमति का मामला था - इस प्रकार, वह एक गलत बचाव के साथ आया था - रिकॉर्ड पर सबूतों को ध्यान में रखते हुए, उच्च न्यायालय ने 376 और 506, आईपीसी के तहत अपराध के लिए अपीलकर्ता को सही ढंग से दोषी ठहराया - पहली अपीलीय न्यायालय होने के नाते, उच्च न्यायालय ने रिकॉर्ड पर मौजूद पूरे साक्ष्य और विचारण न्यायालय द्वारा दिए गए तर्क की फिर से सराहना की - आक्षेपित फैसले में हस्तक्षेप नहीं किया गया - दंड संहिता, 1860 - धारा 375, 376 , 506.

न्यायालय ने अपील खारिज करते हुए

माना: 1.1 मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में उच्च न्यायालय न्यायसंगत है और, इस प्रकार, विचारण न्यायालय द्वारा पारित दोषमुक्त करने के आदेश को उलटने और धारा 376 और 506 आईपीसी के तहत अपराधों के लिए अभियुक्तों को दोषी ठहराने में कोई त्रुटि नहीं की है। प्रथम अपीलीय न्यायालय होने के नाते, उच्च न्यायालय द्वारा रिकॉर्ड पर मौजूद सभी साक्ष्यों और विचारण न्यायालय द्वारा दिए गए तर्क की पुनः सराहना करना उचित था। मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में, उच्च न्यायालय ने इस न्यायालय द्वारा निर्धारित कानून के मापदंडों के भीतर काम किया है। रिकॉर्ड पर मौजूद सभी सबूतों, विशेष रूप से पीडब्लू11 और पीडब्लू22 के रूप में जांचे गए डॉक्टरों के बयान की सराहना करते हुए, उच्च न्यायालय ने विशेष रूप से पाया है कि पीड़ित का आईक्यू 62 था जो पीड़ित के इतिहास और मानसिक स्थिति की जांच पर आधारित था। केवल इसलिए कि पीड़िता कुछ घरेलू काम करने की स्थिति में थी, इस चिकित्सीय साक्ष्य को खारिज नहीं किया जा सकता कि पीड़िता हल्की मानसिक रूप से विकलांग थी और वह यौन उत्पीड़न के अच्छे और बुरे पहलू को समझने की स्थिति में नहीं थी। ऐसा प्रतीत होता है कि आरोपी ने पीड़िता की मानसिक बीमारी का फायदा उठाया। इस तथ्य के साथ इसकी सराहना की जानी आवश्यक है कि आरोपी को पीड़िता द्वारा दिए गए बच्चे का जैविक पिता पाया गया है। उपरोक्त के बावजूद अभियुक्त का मामला 313 के बयान में पूरी तरह से मुकरने का था। अभियुक्त के मामले में ऐसा कभी नहीं था कि यह सहमति का मामला था। इस प्रकार, आरोपी, झूठा बचाव लेकर आया था। इसलिए, रिकॉर्ड पर मौजूद सबूतों पर विचार करते हुए, विशेष रूप से पीडब्लू11 और पीडब्लू22 के बयान और यहां तक कि अभियोजन पक्ष के अन्य गवाहों के बयान पर, उच्च न्यायालय ने ठीक ही कहा है कि मामला आईपीसी की धारा 375 के तहत आएगा और आरोपी को अपराध के लिए दोषी ठहराया है। धारा 376 आईपीसी. आईपीसी की धारा 375 के पांचवें खंड के अनुसार भी, "एक पुरुष के द्वारा बलात्कार करना कहा जाता है", यदि उसकी सहमति से, ऐसी सहमति देने के समय, मानसिक रूप से अस्वस्थ होने के कारण, वह बलात्कार की प्रकृति और परिणामों को समझने में असमर्थ है जिस पर वह सहमति देती है। जैसा कि देखा गया, आरोपी की ओर से भी ऐसा

नहीं है कि यह सहमति का मामला था। आरोपी ने पीड़िता की मानसिक बीमारी और कम आईक्यू का फायदा उठाया। [पैरा 7, 10 और 11][1008-ए; 1016-डी-एच; 1017-ए-डी]

1.2 चिकित्सीय साक्ष्य से यह पता चलता है कि आईक्यू 62 'हल्की मानसिक मंदता' की श्रेणी में आता है। यह भी सामने आया है कि मानसिक स्थिति और आईक्यू का निर्धारण चोटों और गतिविधियों के आधार पर किया जाता है। किसी मरीज के सवालों, गतिविधियों और उसकी हिस्ट्री के आधार पर किसी व्यक्ति का आईक्यू जाना जा सकता है। इसलिए, भले ही पीड़ित द्वारा ज्ञात भाषा के संबंध में कुछ विरोधाभास हो सकते हैं, उस स्थिति में भी, पीड़ित की मानसिक स्थिति पर संपूर्ण चिकित्सा साक्ष्य पर अविश्वास करना प्रमुख विरोधाभास नहीं कहा जा सकता है। इसलिए, उच्च न्यायालय द्वारा आईपीसी की धारा 376 और 506 के तहत अपराध के लिए आरोपियों को दोषमुक्त करने और दोषी ठहराने के आदेश को पलटना उचित है। वर्तमान में एक पीड़िता पर यौन उत्पीड़न का मामला है, जिसका आईक्यू 62 था और वह मानसिक रूप से विक्षिप्त थी और आरोपी ने पीड़िता की मानसिक बीमारी/बीमारी का अनुचित फायदा उठाया। मानसिक विकार या मानसिक बीमारी से पीड़ित व्यक्ति विशेष देखभाल, प्यार और स्नेह का पात्र है। उनका शोषण नहीं किया जाना चाहिए. वर्तमान मामले में, आरोपी ने पीड़िता की मानसिक बीमारी/बीमारी का फायदा उठाकर उसका शोषण किया है। इसलिए, उच्च न्यायालय द्वारा दोषी ठहराए गए फैसले और पारित आदेश के खिलाफ इस न्यायालय का कोई हस्तक्षेप नहीं है।[पैरा 12,13] [1017-ई-जी; 1018-बी-सी]

बाबू वी केरल राज्य **(2010) 9 एससीसी 189: [2010] 9 एस. सी. आर. 1039;** कुलदिप सिंह बनाम। पुलिस आयुक्त **(1999) 2 एस. सी. सी. 10 [1998] 3 पूरक एससीआर 594;** विजय मोहन सिंह बनाम कर्नाटक राज्य (**2019) 5 एससीसी 436 : [2019] 6 एससीआर 994-पर निर्भर।**
कृष्ण बनाम कर्नाटक राज्य **(2014) 15 एससीसी 596**

केस कानून संदर्भ

(2014) 15 एससीसी 596	**पैरा 5.3 में**	**संदर्भित**
[2010] 9 एससीआर 1039	**पैरा 9.1 पर**	**निर्भर था**
[1998] 3 पूरक एससीआर 594	**पैरा 9.3 पर**	**निर्भर था**
[2019] 6 एससीआर 994	**पैरा 9.4 पर**	**निर्भर था**

आपराधिक अपीलीय क्षेत्राधिकार: 2017 की आपराधिक अपील संख्या 1229।

2014 की आपराधिक अपील संख्या 36 में शिमला स्थित हिमाचल प्रदेश उच्च न्यायालय के निर्णय और आदेश दिनांक 14.09.2016/सजा की मात्रा पर आदेश दिनांक 19.09.2016 से।

सुश्री राधिका गौतम, सार्थक घोंक्रोक्टा, असलम, सलाहकार। उपस्थित पक्षों के लिए.

न्यायालय का निर्णय **एम. आर. शाह**, जे. द्वारा सुनाया गया।

1. आपराधिक अपील संख्या 36/2014 में हिमाचल प्रदेश उच्च न्यायालय, शिमला द्वारा पारित निर्णय और आदेश दिनांक 14.09.2016/19.09.2016 से व्यथित और असंतुष्ट महसूस करना, जिसके द्वारा उच्च न्यायालय ने उक्त अपील को स्वीकार कर लिया है। राज्य द्वारा और अपीलकर्ता को दोषमुक्त करते हुए विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा पारित फैसले और दोषमुक्त करने के आदेश को रद्द कर दिया गया है - आईपीसी की धारा 376 और 506 के तहत अपराधों के लिए मूल आरोपी और परिणामस्वरूप उपरोक्त के लिए अपीलकर्ता - आरोपी को दोषी ठहराया गया है। अपराध और उसे 10,000/- रुपये के जुर्माने के साथ सात साल के कठोर कारावास की सजा सुनाई गई है और जुर्माना न देने पर आईपीसी की धारा 376 के तहत अतिरिक्त छह महीने के कठोर कारावास और 5,000/-

रुपये के जुर्माने के साथ चार साल के कठोर कारावास की सजा सुनाई गई है। जुर्माना अदा न करने पर आईपीसी की धारा 506 के तहत अतिरिक्त तीन माह का कठोर कारावास, मूल अभियुक्त ने वर्तमान अपील दायर की है।

2. वर्तमान अपील के तथ्य संक्षेप में इस प्रकार हैं:

पीड़िता के पिता ने आरोपी के खिलाफ इस आरोप के साथ एफआईआर दर्ज कराई कि 1.4.2008 को उनकी पत्नी धनेश्वरी देवी ने शिमला में उन्हें टेलीफोन पर सूचित किया कि उनकी बेटी (अभियोक्ता) गर्भवती है। यह आरोप लगाया गया कि पीड़िता ने अपनी मां को बताया कि जब वह बकरियों और मवेशियों को चराने के लिए जंगल जाती थी, तो आरोपी भी मवेशियों और बकरियों को चराने के लिए जंगल जाता था। पीड़िता ने अपनी मां को बताया कि तीन-चार महीने पहले आरोपी ने उसके साथ जबरन और उसकी सहमति के बिना यौन संबंध बनाए। आरोपी ने पीड़िता को घटना के बारे में किसी को न बताने की धमकी दी। कि डर के कारण, भूल जाने के कारण और आगे चलकर मानसिक कमजोरी के कारण उसने घटना के बारे में अपनी मां सहित किसी को नहीं बताया. पीड़िता की चिकित्सीय जांच की गई और चिकित्सा अधिकारी के अनुसार पीड़िता को 31 सप्ताह का गर्भ था। उसकी उम्र 19 साल बताई गई. अभियोजक पर मानसिक रूप से विक्षिप्त होने का आरोप लगाया गया था। आईजीएमसी, शिमला के साथ-साथ पीजीआई, चंडीगढ़ में उनकी चिकित्सकीय जांच की गई। अभियोजक ने 19.6.2008 को केएनएच, शिमला में एक कन्या को जन्म दिया। डीएनए परीक्षण के लिए पीड़िता, बच्चे और आरोपी के रक्त के नमूने लिए गए। रिपोर्ट के मुताबिक, आरोपी बच्ची का जैविक पिता था। आरोपी को गिरफ्तार कर लिया गया. जांच पूरी होने के बाद, जांच अधिकारी ने आरोपी के खिलाफ धारा 376 और 506 आईपीसी के तहत अपराध के लिए आरोप पत्र प्रस्तुत किया।

अभियुक्त ने स्वयं को निर्दोष बताया और इसलिए उपरोक्त अपराधों के लिए विद्वान निचली न्यायालय में उस पर मुकदमा चलाया गया।

2.1 अभियुक्त के खिलाफ मामले को साबित करने के लिए, अभियोजन पक्ष ने 23 गवाहों से पूछताछ की, जिनमें पीड़िता के माता-पिता (पीडब्लू 1 और 2), अभियोजक (पीडब्लू 3), प्रयोगशाला तकनीशियन - जीतेंद्र कुमार (पीडब्लू 8), डॉ. सरला चंद (पीडब्लू 9) शामिल थे।), डॉ. राकेश कुमार, रेडियोलॉजिस्ट (पीडब्लू10), डॉ. रमेश कुमार, सहायक प्रोफेसर, मनोचिकित्सा विभाग (पीडब्लू11), डॉ. जीवा नंद चौहान (पीडब्लू12), नंद सिंह, सीनियर लैब तकनीशियन, केएनएच, शिमला (पीडब्लू13) , डॉ. मोनिका शर्मा (पीडब्लू14), एएसआई टकपा दोरजे (पीडब्लू17), एसआई सुंदर सिंह (पीडब्लू19), डॉ. रमा मल्होत्रा, पीजीआई, चंडीगढ़ (पीडब्लू22) और अन्य गवाह। कि अभियोजन की ओर से साक्ष्य समापन के पश्चात अभियुक्त का बयान धारा 313 सीआरपीसी के तहत रिकॉर्ड कराया गया था । उन्होंने पूरी तरह से निर्दोष होने का अनुरोध किया। विद्वान विचारण न्यायालय ने आरोपी को मुख्य रूप से एफआईआर दर्ज करने में देरी के आधार पर दोषमुक्त कर दिया और इस आधार पर भी कि अभियोजन पक्ष परिणामों को और क्या हो रहा था समझने के लिए मानसिक रूप से अस्वस्थ नहीं था।

3. विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और दोषमुक्त करने के आदेश से व्यथित और असंतुष्ट महसूस करते हुए, राज्य ने उच्च न्यायालय के समक्ष अपील की और आक्षेपित निर्णय और आदेश और रिकॉर्ड पर संपूर्ण साक्ष्य की पुनः सराहना की, विशेष रूप से चिकित्सीय साक्ष्य के आधार पर, उच्च न्यायालय ने दोषमुक्त करने के आदेश को उलट दिया है और आरोपी को आईपीसी की धारा 376 और 506 के तहत अपराध के लिए दोषी ठहराया है, यह देखते हुए कि पीड़िता यौन उत्पीड़न के अच्छे और बुरे पहलू को समझने की स्थिति में नहीं थी। रिकॉर्ड पर मौजूद सभी सबूतों की दोबारा सराहना करने पर, उच्च न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि पीड़िता का आईक्यू 62 था और वह हल्की मानसिक विकलांगता थी।

4. उपरोक्त अपराधों के लिए अभियुक्तों को दोषी ठहराते हुए उच्च न्यायालय द्वारा पारित फैसले और सजा के आदेश से व्यथित और असंतुष्ट महसूस करते हुए, मूल अभियुक्त ने वर्तमान अपील को प्राथमिकता दी है।

5. सुश्री राधिका गौतम, विद्वान अधिवक्ता अपीलकर्ता के लिए उपस्थित हुए हैं और श्री सार्थक घोंक्रोक्टा, अधिवक्ता प्रतिवादी-राज्य के लिए उपस्थित हुए हैं।

5.1 अपीलकर्ता - अभियुक्त की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता सुश्री राधिका गौतम ने दृढ़तापूर्वक प्रस्तुत किया है कि मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में उच्च न्यायालय ने दोषमुक्ति के फैसले को उलटने और दोषमुक्ति के खिलाफ अपील में आरोपी को दोषी ठहराने में भौतिक गलती की है। यह प्रस्तुत किया गया है कि विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा ठोस कारण दिए गए थे, जो रिकॉर्ड पर मौजूद साक्ष्यों की सराहना पर थे, और इसलिए दोषमुक्त किए जाने के खिलाफ अपील में अपीलीय क्षेत्राधिकार के प्रयोग में उच्च न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप करने की आवश्यकता नहीं थी। .

5.2 अपीलकर्ता-अभियुक्त के विद्वान वकील ने निम्नलिखित दलीलें दी हैं:

i) जब अभियोजन पक्ष ने दावा किया कि घटना घटी है तब से एफआईआर दर्ज करने में चार महीने की देरी हुई थी और इसलिए निचली न्यायालय ने आरोपी को सही ही दोषमुक्त कर दिया;

ii) यहां तक कि पीड़िता के पिता (पीडब्लू1) ने भी स्पष्ट रूप से कहा कि अपीलकर्ता - आरोपी को मामले पर चर्चा करने के लिए बुलाया गया था और उसने बच्चे की देखभाल करने की पेशकश की लेकिन पीड़िता से शादी करने से इनकार कर दिया। इसलिए यह प्रस्तुत किया गया है कि एफआईआर केवल प्रतिशोधात्मक कार्रवाई के रूप में दर्ज की गई थी। यह प्रस्तुत किया गया है कि अपीलकर्ता-अभियुक्त अभियोक्ता से शादी करने की स्थिति में नहीं था क्योंकि अपीलकर्ता शादीशुदा थी और उसके अपने बच्चे थे;

iii) इस तरह एफआईआर दर्ज करने में घटना की तारीख से 8 महीने की देरी हुई। यह प्रस्तुत किया गया है कि दिनांक 22.4.2008 को एफआईआर दर्ज करने के अगले दिन जब अभियोजक की जांच की गई तो उसके गर्भ में 8 महीने का भ्रूण पाया गया। यह प्रस्तुत किया गया है कि यह विश्वास करने योग्य नहीं है कि माता-पिता को अभियोक्ता की गर्भावस्था के बारे में जानकारी नहीं थी;

iv) जैसा कि अभियोजन पक्ष ने दावा किया है, अभियोजन पक्ष हल्के मानसिक विकलांगता से पीड़ित नहीं था। यह प्रस्तुत किया गया है कि दो मनोचिकित्सकों ने अलग-अलग विवरण दिया है कि अभियोजक कौन सी भाषा जानता है। प्रस्तुत किया गया है कि एक का कहना है कि वह 'हिन्दी' जानती थी और दूसरे का कहना है कि वह 'फरी' जानती थी और उसे दुभाषिया का उपयोग करना पड़ा। यह प्रस्तुत किया गया है कि यह अभियोजन पक्ष के मामले में एक बड़ी विसंगति है, जब एक डॉक्टर, जिसके बारे में माना जाता है कि उसने उसकी मानसिक क्षमताओं का मूल्यांकन किया होगा और इसलिए उससे कई प्रश्न पूछे होंगे, जो उसने हिंदी में बोले थे और दूसरे डॉक्टर, जिसे उससे भी पूछना चाहिए था। फ़री में बहुत सारे प्रश्न थे और उन्हें दुभाषिया का उपयोग करना पड़ा। यह प्रस्तुत किया गया है कि इसलिए या तो दोनों या उनमें से कम से कम एक सही तथ्य नहीं बता रहा है;

v) यहां तक कि पीड़िता के साथ-साथ पीड़िता की मां, बहन और पिता के बयान में भी भौतिक विरोधाभास हैं, क्योंकि पीड़िता ने कहा कि उसे अपनी गर्भावस्था के बारे में अपने परिवार के सदस्यों से पता चला जब उन्होंने उसे इसके बारे में बताया, जबकि माँ, बहन और पिता की गवाही से पता चलता है कि यह स्पष्ट रूप से अभियोक्ता ही थी जिसने अपनी बहन को गर्भावस्था के बारे में सूचित किया था;

vi) उच्च न्यायालय ने इस निष्कर्ष पर पहुंचते हुए मुख्य रूप से PW22 के चिकित्सा साक्ष्य पर भरोसा किया है कि अभियोक्ता हल्के मानसिक रूप से विकलांग थी। यह प्रस्तुत किया गया है कि PW22 के बयान की तुलना परिवार के अन्य सदस्यों के बयान से की गई है। जैसा कि विद्वान विचारण न्यायालय ने ठीक ही कहा था, अभियोजक एक व्यक्ति था जो उसके कल्याण को समझने में सक्षम था और काफी बुद्धिमान था।

5.3 उपरोक्त प्रस्तुतियाँ करते हुए और कृष्णा बनाम कर्नाटक राज्य (2014) 15 एससीसी 596 के मामले में इस न्यायालय के निर्णय पर भरोसा करते हुए, यह प्रस्तुत किया गया है कि उच्च न्यायालय ने विद्वान द्वारा पारित दोषमुक्त के आदेश को उलटने में स्पष्ट रूप से गलती की है। विचारण न्यायालय जो रिकॉर्ड पर साक्ष्य की सराहना पर आधारित था और विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा लिया गया दृष्टिकोण एक प्रशंसनीय दृष्टिकोण था।

5.4 अपीलकर्ता - आरोपी की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता द्वारा आगे प्रस्तुत किया गया है कि सात साल की कैद में से, आरोपी पहले ही चार साल की सजा काट चुका है और इसलिए वर्तमान अपील की अनुमति देने और खारिज करने और आक्षेपित फैसले को रद्द करने की प्रार्थना की जाती है और उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश और विकल्प में अभियुक्त द्वारा पहले ही काटी गई अवधि को सजा को कम करना।

6. वर्तमान अपील का विरोध करते हुए, राज्य की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने दृढ़तापूर्वक प्रस्तुत किया है कि मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में उच्च न्यायालय ने विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा पारित दोषमुक्त करने के आदेश को सही ढंग से उलट दिया है और दोषी ठहराया है। आईपीसी की धारा 376 और 506 के तहत अपराधों के लिए आरोपी बनाया गया, खासकर जब पीड़िता मानसिक बीमारी से पीड़ित थी और चिकित्सा साक्ष्य के अनुसार वह यौन उत्पीड़न के अच्छे और बुरे पहलू को समझने की स्थिति में नहीं थी।

6.1 राज्य के विद्वान वकील ने निम्नलिखित बनाया है
प्रस्तुतियाँ:

i) प्रथम अपीलीय न्यायालय के रूप में उच्च न्यायालय रिकॉर्ड पर मौजूद संपूर्ण साक्ष्यों की दोबारा समीक्षा करने और सही निष्कर्ष पर पहुंचने के अपने अधिकार क्षेत्र में था। यह प्रस्तुत किया गया है कि वर्तमान मामले में उच्च न्यायालय ने रिकॉर्ड पर मौजूद संपूर्ण साक्ष्यों, विशेष रूप से चिकित्सा साक्ष्यों की सही ढंग से पुनः सराहना की है;

ii) एफआईआर दर्ज करने में देरी के पहलू पर उच्च न्यायालय पहले ही विचार कर चुका है। यह प्रस्तुत किया गया है कि इस प्रकार आरोपी ने पीड़िता की मानसिक स्थिति का अनुचित लाभ उठाया था और इसलिए यदि कोई भौतिक विरोधाभास है, तो भी लाभ आरोपी को नहीं मिलेगा और लाभ ऐसे पीड़ित के पक्ष में जाना चाहिए जो मानसिक रोग से पीड़ित है और यौन उत्पीड़न के अच्छे और बुरे पहलू को समझने की स्थिति में नहीं है।;

iii) वर्तमान मामले में अभियुक्त के आचरण की भी सराहना की जानी आवश्यक है। यह प्रस्तुत किया गया है कि यह एक स्वीकृत स्थिति है कि आरोपी ने पीड़िता के साथ यौन संबंध बनाए थे और इसके कारण पीड़िता गर्भवती थी और उसने एक बच्चे को जन्म दिया। आरोपी अब इस बात से इनकार नहीं कर रहा है कि बच्चा उसका नहीं है। उपरोक्त के बावजूद उनके द्वारा 313 सी.आर.पी.सी. बयान में कहा गया है कि उनका मामला पूरी तरह से इनकार और निर्दोषता का था और यह उनका मामला भी नहीं था कि अभियोक्ता सहमति देने वाली पक्ष थी और उसने अभियोक्ता की सहमति से यौन संबंध बनाए थे। यह प्रस्तुत किया गया है कि इस प्रकार आरोपी ने अपने 313 बयान में एक झूठा मामला सामने रखा और सही तथ्य नहीं बताए;

iv) अब जहां तक आरोपी की ओर से यह निवेदन है कि सात साल की सज़ा में से, आरोपी ने चार साल की सज़ा काट ली है और इसलिए इसे आरोपी के पक्ष में माना जा सकता है, यह प्रस्तुत किया जाता है कि न्यूनतम सज़ा प्रदान की जाए धारा 376 के तहत अपराध के लिए सात साल की सज़ा है और इसे केवल विशेष कारण बताकर ही कम किया जा सकता है। यह प्रस्तुत किया गया है कि वर्तमान मामले में, उच्च न्यायालय ने पहले ही केवल सात साल की आरआई का आदेश देकर उदार दृष्टिकोण अपनाया है। यह प्रस्तुत किया गया है कि जब यह मानसिक बीमारी से पीड़ित व्यक्ति पर यौन उत्पीड़न का मामला है और आरोपी ने पीड़िता की मानसिक स्थिति को नुकसान पहुंचाया है, तो ऐसे मामलों को सख्ती से निपटा जाना चाहिए और ऐसे आरोपी के प्रति कोई नरमी नहीं दिखाई जानी चाहिए।

6.2 उपरोक्त दलीलें देते हुए, वर्तमान अपील को खारिज करने की प्रार्थना की जाती है।

7. हमने संबंधित पक्षों के विद्वान वकील को विस्तार से सुना है।

शुरुआत में, यह ध्यान दिया जाना आवश्यक है कि उच्च न्यायालय ने आक्षेपित निर्णय और आदेश द्वारा आरोपी को आईपीसी की धारा 376 और 506 के तहत अपराध के लिए दोषी ठहराया है। यह भी ध्यान देने की आवश्यकता है कि सबूतों की दोबारा समीक्षा करने पर, उच्च न्यायालय ने पाया कि पीड़िता का आईक्यू बहुत कम था और वह मानसिक बीमारी से पीड़ित थी और वह यौन उत्पीड़न के अच्छे और बुरे पहलू को समझने की स्थिति में नहीं थी।. यह भी ध्यान दिया जाना आवश्यक है और यह विवादित नहीं है कि आरोपी ने पीड़िता के साथ यौन संबंध बनाए थे और पीड़िता ने एक बच्चे को जन्म दिया था और यह पाया गया कि आरोपी पीड़िता द्वारा दिए गए बच्चे का जैविक पिता है। यह भी ध्यान देने की जरूरत है कि 313 के बयान में आरोपी का मामला पूरी तरह से इनकार का था। उनका मामला यह नहीं था कि यह सहमति का मामला था. इस प्रकार, आरोपी, झूठा बचाव लेकर आया था।

8. यह सच है कि विद्वान निचली न्यायालय ने आरोपी को दोषमुक्त कर दिया।
हालाँकि, उच्च न्यायालय ने रिकॉर्ड पर मौजूद सभी साक्ष्यों की पुनः सराहना करते हुए आरोपी को आईपीसी की धारा 376 और 506 के तहत अपराध के लिए दोषी पाया है और विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा पारित दोषमुक्त करने के आदेश को उलट दिया है। अपीलकर्ता-अभियुक्त की ओर से यह मामला है कि विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा पारित दोषमुक्त करने के आदेश के खिलाफ अपील में, उच्च न्यायालय ने अभियुक्त को दोषी ठहराने और विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा पारित दोषमुक्त करने के आदेश को उलटने में गंभीर त्रुटि की है। इसलिए, मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर विचार करने वाली पहली बात यह है कि क्या उच्च न्यायालय द्वारा निचली न्यायालय द्वारा पारित दोषमुक्त करने के आदेश में हस्तक्षेप करना और इस तरह अभियुक्त को दोषी ठहराना उचित है?

9. गुण-दोष के आधार पर अपील पर विचार करने से पहले, दोषमुक्ति के विरुद्ध अपील पर कानून पर विचार करना आवश्यक है।

9.1 बाबू बनाम केरल राज्य, (2010) 9 एससीसी 189) के मामले में, इस न्यायालय ने सीआरपीसी की धारा 378 के तहत दोषमुक्त के खिलाफ अपील में पालन किए जाने वाले सिद्धांतों को दोहराया था।
पैराग्राफ 12 से 19 में, इसे निम्नानुसार देखा और माना जाता है:

12. इस न्यायालय ने बार-बार विचारण न्यायालय द्वारा पारित फैसले और दोषमुक्त के आदेश में हस्तक्षेप करने के लिए उच्च न्यायालय के लिए दिशानिर्देश निर्धारित किए हैं। अपीलीय न्यायालय को आम तौर पर ऐसे मामले में दोषमुक्त करने के फैसले को रद्द नहीं करना चाहिए जहां दो दृष्टिकोण संभव हैं, हालांकि अपीलीय न्यायालय का दृष्टिकोण अधिक संभावित हो सकता है। दोषमुक्त करने के फैसले से निपटने के दौरान, अपीलीय न्यायालय को रिकॉर्ड पर मौजूद पूरे सबूतों पर विचार करना होता है, ताकि इस निष्कर्ष पर पहुंचा जा सके कि विचारण न्यायालय के विचार विकृत थे या अन्यथा टिकाऊ नहीं थे। अपीलीय न्यायालय को इस बात पर विचार करने का अधिकार है कि क्या किसी तथ्य पर पहुंचने में विचारण न्यायालय स्वीकार्य साक्ष्यों पर विचार करने में विफल रहा है और/या कानून के विपरीत रिकॉर्ड पर लाए गए साक्ष्यों पर विचार किया है। इसी प्रकार, सबूत का गलत बोझ डालना भी अपीलीय न्यायालय द्वारा जांच का विषय हो सकता है। (देखें बालक राम बनाम यूपी राज्य (1975) 3 एससीसी 219, शंभू मिसिर बनाम बिहार राज्य (1990) 4 एससीसी 17, शैलेन्द्र प्रताप बनाम यूपी राज्य (2003) 1 एससीसी 761, नरेंद्र सिंह बनाम बिहार राज्य एम.पी. (2004) 10 एससीसी 699, बुद्ध सिंह बनाम स्टेट ऑफ यूपी (2006) 9 एससीसी 731, स्टेट ऑफ यूपी बनाम राम वीर सिंह (2007) 13 एससीसी 102, एस. रामा कृष्णा बनाम एस. रामी रेड्डी (2008) 5 एससीसी 535, अरुलवेलु बनाम राज्य (2009) 10 एससीसी 206, पेरला सोमशेखर रेड्डी बनाम आंध्र प्रदेश राज्य (2009) 16 एससीसी 98 और राम सिंह बनाम हिमाचल प्रदेश राज्य (2010) 2 एससीसी 445)

13. शेओ स्वरूप बनाम किंग एम्परर एआईआर 1934 पीसी 227 में, प्रिवी काउंसिल ने निम्नानुसार कहा: (आईए पृष्ठ 404) "... उच्च न्यायालय को हमेशा ऐसे मामलों पर उचित महत्व और विचार करना चाहिए जैसे (1) गवाहों की विश्वसनीयता के संबंध में विचारण न्यायाधीश के विचार; (2) अभियुक्त के पक्ष में निर्दोषता की धारणा, एक धारणा निश्चित रूप से इस तथ्य से कमजोर नहीं हुई है कि उसे अपने मुकदमे में दोषमुक्त कर दिया गया है; (3) किसी भी संदेह के लाभ के लिए अभियुक्त का अधिकार;

और (4) एक न्यायाधीश द्वारा निकाले गए तथ्य के निष्कर्ष को परेशान करने में अपीलीय न्यायालय की सुस्ती, जिसे गवाहों को देखने का लाभ मिला था।

14. कानून के उपरोक्त सिद्धांत का इस न्यायालय द्वारा लगातार पालन किया गया है। (देखें तुलसीराम कानू बनाम राज्य एआईआर 1954 एससी 1, बलबीर सिंह बनाम पंजाब राज्य एआईआर 1957 एससी 216, एमजी अग्रवाल बनाम महाराष्ट्र राज्य एआईआर 1963 एससी 200, खेदू मोहटन बनाम बिहार राज्य (1970) 2 एससीसी 450, सांबसिवन बनाम केरल राज्य (1998) 5 एससीसी 412, भगवान सिंह बनाम मध्य प्रदेश राज्य (2002) 4 एससीसी 85 और गोवा राज्य बनाम संजय ठकरान (2007) 3 एससीसी 755)

15. चंद्रप्पा बनाम कर्नाटक राज्य (2007) 4 एससीसी 415 में, इस न्यायालय ने कानूनी स्थिति को निम्नानुसार दोहराया: (एससीसी पृष्ठ 432, पैरा 42)

"(1) एक अपीलीय न्यायालय के पास उन सबूतों की समीक्षा, पुन: मूल्यांकन और पुनर्विचार करने की पूरी शक्ति है, जिन पर दोषमुक्त करने का आदेश आधारित है।

(2) आपराधिक प्रक्रिया संहिता, 1973 इस तरह की शक्ति के प्रयोग पर कोई सीमा, प्रतिबंध या शर्त नहीं लगाती है और अपीलीय न्यायालय तथ्य और कानून दोनों के प्रश्नों पर अपने निष्कर्ष पर पहुंचने से पहले सबूतों पर विचार कर सकती है।

(3) दोषमुक्ति के विरुद्ध अपील में अपीलीय न्यायालय द्वारा विभिन्न अभिव्यक्तियाँ, जैसे, 'पर्याप्त और सम्मोहक कारण', 'अच्छे और पर्याप्त आधार', 'बहुत मजबूत परिस्थितियाँ', 'विकृत निष्कर्ष', 'स्पष्ट गलतियाँ' आदि का उद्देश्य किसी की व्यापक शक्तियों को कम करना नहीं है। साक्ष्यों की समीक्षा करने और अपने स्वयं के निष्कर्ष पर आने की न्यायालय की शक्ति को कम करने की तुलना में अपीलीय न्यायालय की दोषमुक्त करने में हस्तक्षेप करने की अनिच्छा पर जोर देने के लिए इस तरह की वाक्यांशविज्ञान 'भाषा के पनपने' की प्रकृति में अधिक हैं।

(4) हालाँकि, अपीलीय न्यायालय को यह ध्यान में रखना चाहिए कि दोषमुक्त होने की स्थिति में, अभियुक्त के पक्ष में दोहरी धारणा होती है। सबसे पहले, निर्दोषता का अनुमान उसे आपराधिक न्यायशास्त्र के मूल सिद्धांत के तहत उपलब्ध है कि प्रत्येक व्यक्ति को तब तक निर्दोष माना जाएगा जब तक कि वह सक्षम न्यायालय द्वारा दोषी साबित न हो जाए। दूसरे, आरोपी ने अपनी रिहाई सुनिश्चित कर ली है, उसकी बेगुनाही की धारणा को विचारण न्यायालय द्वारा और भी मजबूत, पुन: पुष्टि और मजबूत किया गया है।

(5) यदि रिकॉर्ड पर मौजूद साक्ष्य के आधार पर दो उचित निष्कर्ष संभव हैं, तो अपीलीय न्यायालय को विचारण न्यायालय द्वारा दर्ज किए गए दोषमुक्ति के निष्कर्ष को परेशान नहीं करना चाहिए।

16. घूरे लाल बनाम यूपी राज्य (2008) 10 एससीसी 450 में, इस न्यायालय ने उक्त दृष्टिकोण को दोहराया, यह देखते हुए कि अपीलीय न्यायालय को उन मामलों से निपटने में जिनमें विचारण न्यायालय ने आरोपियों को दोषमुक्त कर दिया है, उन्हें यह ध्यान में रखना चाहिए कि विचारण न्यायालय के दोषमुक्त होने से इस धारणा को बल मिलता है कि वह निर्दोष है। अपीलीय न्यायालय को विचारण न्यायालय के फैसले को उचित महत्व और विचार देना चाहिए क्योंकि विचारण न्यायालय को गवाहों के व्यवहार को देखने का विशिष्ट लाभ था, और वह गवाहों की विश्वसनीयता का मूल्यांकन करने के लिए बेहतर स्थिति में थी।

17. राजस्थान राज्य बनाम नरेश (2009) 9 एससीसी 368 में, न्यायालय ने फिर से इस न्यायालय के पहले के निर्णयों की जांच की और निर्धारित किया कि: (एससीसी पृष्ठ 374, पैरा 20)

"20. ... दोषमुक्त करने के आदेश में हल्के से हस्तक्षेप नहीं किया जाना चाहिए, भले ही न्यायालय को लगे कि कुछ साक्ष्य आरोपी की ओर इशारा कर रहे हैं।"

18. यूपी राज्य में बनाम बन्ने (2009) 4 एससीसी 271, इस न्यायालय ने कुछ उदाहरणात्मक परिस्थितियाँ दीं जिनमें न्यायालय द्वारा उच्च न्यायालय द्वारा दोषमुक्त किए जाने के फैसले में हस्तक्षेप करना उचित होगा। परिस्थितियों में शामिल हैं: (एससीसी पृष्ठ 286, पैरा 28)

"(i) उच्च न्यायालय का निर्णय स्थापित कानूनी स्थिति की अनदेखी करके कानून के पूरी तरह से गलत दृष्टिकोण पर आधारित है;

(ii) उच्च न्यायालय के निष्कर्ष रिकॉर्ड पर मौजूद साक्ष्यों और दस्तावेजों के विपरीत हैं;

(iii) सबूतों से निपटने में उच्च न्यायालय का पूरा दृष्टिकोण स्पष्ट रूप से अवैध था जिससे न्याय की गंभीर हानि हुई;

(iv) मामले के रिकॉर्ड पर गलत कानून और तथ्यों के आधार पर उच्च न्यायालय का निर्णय स्पष्ट रूप से अन्यायपूर्ण और अनुचित है;

(v) इस न्यायालय को हमेशा उच्च न्यायालय के निष्कर्षों को उचित महत्व और विचार देना चाहिए;

(vi) यह न्यायालय ऐसे मामले में हस्तक्षेप करने में बेहद अनिच्छुक होगा जब सत्र न्यायालय और उच्च न्यायालय दोनों ने दोषमुक्त करने का आदेश दर्ज किया हो।

इसी तरह का दृष्टिकोण इस न्यायालय द्वारा धनपाल बनाम राज्य (2009) 10 एससीसी 401 में दोहराया गया है।

19. इस प्रकार, इस मुद्दे पर कानून को इस आशय से संक्षेप में प्रस्तुत किया जा सकता है कि असाधारण मामलों में जहां बाध्यकारी परिस्थितियां हैं, और अपील के तहत निर्णय विकृत पाया जाता है, अपीलीय न्यायालय दोषमुक्त करने के आदेश में हस्तक्षेप कर सकती है। अपीलीय न्यायालय को अभियुक्त की बेगुनाही की धारणा को ध्यान में रखना चाहिए और आगे यह कि विचारण न्यायालय का दोषमुक्त होना उसकी बेगुनाही की धारणा को मजबूत करता है। जहां दूसरा दृष्टिकोण संभव हो वहां नियमित तरीके से हस्तक्षेप से बचना चाहिए, जब तक कि हस्तक्षेप के लिए अच्छे कारण न हों।"

9.2 जब किसी न्यायालय द्वारा दर्ज किए गए तथ्य के निष्कर्षों को विकृत माना जा सकता है, तो उपरोक्त निर्णय के पैराग्राफ 20 में निपटाया और विचार किया गया है, जो इस प्रकार है:

"20. किसी न्यायालय द्वारा दर्ज किए गए तथ्य के निष्कर्षों को विकृत माना जा सकता है यदि निष्कर्ष प्रासंगिक सामग्री को अनदेखा या बाहर करके या अप्रासंगिक/अस्वीकार्य सामग्री पर विचार करके निकाले गए हों। निष्कर्ष को विकृत भी कहा जा सकता है यदि यह "साक्ष्य के वजन के विरुद्ध" है, या यदि निष्कर्ष इतनी अपमानजनक रूप से तर्क की अवहेलना करता है कि तर्कहीनता के दोष से ग्रस्त है। (वीडियो राजिंदर कुमार किंद्रा बनाम दिल्ली एडमिनिस्ट्रेशन (1984) 4 एससीसी 635, एक्साइज एंड टैक्सेशन ऑफिसर-कम-असेसिंग अथॉरिटी बनाम गोपी नाथ एंड संस 1992 सपोर्ट (2) एससीसी 312, त्रिवेणी रबर एवं प्लास्टिक बनाम सीसीई 1994 सप्लिमेंट। (3) एससीसी 665, गया दीन बनाम हनुमान प्रसाद (2001) 1 एससीसी 501, अरुवेलु बनाम राज्य (2009) 10 एससीसी 206 और गामिनी बाला कोटेश्वर राव बनाम राज्य ए.पी. (2009) 10 एससीसी 636)।"

(जोर दिया गया)

9.3 कुलदीप सिंह बनाम पुलिस आयुक्त (1999) 2 एससीसी 10 के मामले में इस न्यायालय के निर्णय का पालन करने के बाद, यह देखा गया है कि यदि कोई निर्णय बिना किसी सबूत या पूरी तरह से अविश्वसनीय सबूत के आधार पर आता है और नहीं

उचित व्यक्ति इस पर कार्य करेगा, आदेश विकृत होगा। लेकिन अगर रिकॉर्ड पर कुछ सबूत हैं जो स्वीकार्य हैं और जिन पर भरोसा किया जा सकता है, तो निष्कर्षों को विकृत नहीं माना जाएगा और निष्कर्षों में हस्तक्षेप नहीं किया जाएगा।

9.4 विजय मोहन सिंह बनाम कर्नाटक राज्य, (2019) 5 एससीसी 436 के हालिया फैसले में, इस न्यायालय को फिर से धारा 378 सीआरपीसी के दायरे पर विचार करने का अवसर मिला। और द्वारा हस्तक्षेप दोषमुक्त किये जाने के विरुद्ध अपील में उच्च न्यायालय। इस न्यायालय ने 1952 से ही इस न्यायालय के निर्णयों पर विचार किया। अनुच्छेद 31 में, इसे निम्नानुसार देखा और रखा गया है:

"31. उम्मेदभाई जाधवभाई (1978) 1 एससीसी 228 मामले में इस न्यायालय के समक्ष एक समान प्रश्न पर विचार किया गया था। इस न्यायालय के समक्ष मामले में, उच्च न्यायालय ने रिकॉर्ड पर सभी साक्ष्यों की पुनः सराहना पर विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा पारित दोषमुक्त करने के आदेश में हस्तक्षेप किया था। हालाँकि, उच्च न्यायालय ने दोषमुक्त करने के फैसले को पलटते हुए, आरोपी को दोषमुक्त करते समय निचली न्यायालय द्वारा दिए गए कारणों पर विचार नहीं किया। उच्च न्यायालय के फैसले की पुष्टि करते हुए, इस न्यायालय ने पैरा 10 में निम्नानुसार अवलोकन किया और कहा: (एससीसी पृष्ठ 233)

"10. एक बार जब दोषमुक्त करने के आदेश के खिलाफ अपील पर सही ढंग से विचार किया गया, तो उच्च न्यायालय स्वतंत्र रूप से पूरे सबूतों की फिर से सराहना करने और अपने निष्कर्ष पर पहुंचने का हकदार था। आम तौर पर, उच्च न्यायालय सत्र न्यायाधीश की राय को उचित महत्व देगा यदि वह साक्ष्य की उचित सराहना के बाद तय की गई हो। यह नियम वर्तमान मामले में लागू नहीं होगा जहां सत्र न्यायाधीश ने मामले की विशिष्ट परिस्थितियों में एक बहुत ही महत्वपूर्ण और निर्णायक पहलू की बिल्कुल गलत धारणा बनाई है।

31.1. सांबसिवन बनाम केरल राज्य (1998) 5 एससीसी 412 में, उच्च न्यायालय ने निचली न्यायालय द्वारा पारित दोषमुक्त करने के आदेश को पलट दिया और रिकॉर्ड पर पूरे सबूतों की फिर से समीक्षा करने पर आरोपी को दोषी ठहराया, हालांकि, उच्च न्यायालय ने रिकॉर्ड नहीं किया। इस सवाल पर इसका निष्कर्ष कि क्या सबूतों से निपटने में विचारण न्यायालय का दृष्टिकोण स्पष्ट रूप से अवैध था या उसके द्वारा निकाले गए निष्कर्ष पूरी तरह से अस्थिर थे। इस बात से संतुष्ट होने के बाद कि विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा पारित दोषमुक्त करने का आदेश विकृत था और कमजोरियों से ग्रस्त था, उच्च न्यायालय द्वारा अभियुक्तों को दोषी ठहराए जाने के आदेश की पुष्टि करते हुए, इस न्यायालय ने उच्च न्यायालय द्वारा पारित दोषसिद्धि के आदेश में हस्तक्षेप करने से इनकार कर दिया। उच्च न्यायालय द्वारा पारित दोषसिद्धि के आदेश की पुष्टि करते हुए, इस न्यायालय ने पैरा 8 में निम्नानुसार टिप्पणी की: (एससीसी पृष्ठ 416)

"8. हमने यह सुनिश्चित करने के लिए अपील के तहत फैसले का अध्ययन किया है कि क्या उच्च न्यायालय उपरोक्त सिद्धांतों के अनुरूप है। हमने पाया कि उच्च न्यायालय ने रमेश बाबूलाल दोशी बनाम गुजरात राज्य (1996) 9 एससीसी 225 अर्थात इस न्यायालय द्वारा निर्धारित तरीके से सख्ती से आगे नहीं बढ़ाया है। पहले इस सवाल पर अपना निष्कर्ष दर्ज करना कि क्या सबूतों से निपटने में विचारण न्यायालय का दृष्टिकोण स्पष्ट रूप से अवैध था या उसके द्वारा निकाले गए निष्कर्ष पूरी तरह से अस्थिर थे, जो अकेले दोषमुक्त करने के आदेश में हस्तक्षेप को उचित ठहराएगा, हालांकि उच्च न्यायालय ने एक प्रतिपादन किया है। अपने समक्ष उठाए गए सभी विवादों को उचित रूप से पूरा करने वाला सुविचारित निर्णय। लेकिन फिर क्या यह गैर-अनुपालन अपील के तहत फैसले को रद्द करने को उचित ठहराएगा? हम सोचते हैं, नहीं। हमारे विचार में, ऐसे मामले में, न्यायालय का दृष्टिकोण, जो एक अपीलीय न्यायालय के फैसले की वैधता पर विचार कर रहा है, जिसने विचारण न्यायालय द्वारा पारित दोषमुक्त करने के आदेश को पलट दिया है, खुद को संतुष्ट करने के लिए होना चाहिए यदि विचारण का दृष्टिकोण सबूतों से निपटने में न्यायालय स्पष्ट रूप से अवैध थी या उसके द्वारा निकाले गए निष्कर्ष स्पष्ट रूप से अस्थिर थे और क्या अपीलीय न्यायालय का निर्णय उन कमजोरियों से मुक्त था; यदि ऐसा है तो यह माना जाए कि विचारण न्यायालय के फैसले में हस्तक्षेप की आवश्यकता है। ऐसे मामले में, स्पष्ट रूप से कोई कारण नहीं है कि अपीलीय न्यायालय के फैसले को परेशान किया जाए। लेकिन अगर दूसरी ओर न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचती है कि विचारण न्यायालय के फैसले में कोई खामी नहीं है, तो यह नहीं माना जा सकता कि दोषमुक्त करने के आदेश में अपीलीय न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप उचित नहीं था; तो ऐसे मामले में अपीलीय न्यायालय के फैसले को रद्द करना होगा क्योंकि दो उचित

विचारों में से, केवल दोषमुक्त करने के समर्थन में ही खड़ा होना होगा। उपरोक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए, हम इस मामले में विचारण न्यायालय के फैसले की जांच करने के लिए आगे बढ़ेंगे।

31.2. के. रामकृष्णन उन्नीथन बनाम केरल राज्य (1999) 3 एससीसी 309 में, यह देखने के बाद कि हालांकि आरोपी की ओर से उपस्थित विद्वान वकील की शिकायत में कुछ दम है कि उच्च न्यायालय ने दिए गए सभी कारणों पर ध्यान नहीं दिया है। विचारण जज द्वारा दोषमुक्त करने के आदेश के अनुसार, इस न्यायालय ने उच्च न्यायालय द्वारा पारित दोषसिद्धि के आदेश को रद्द करने से इनकार कर दिया, क्योंकि उसने पाया कि दोषमुक्त करने के आदेश को दर्ज करने में सत्र न्यायाधीश का दृष्टिकोण उचित नहीं था और निष्कर्ष निकाला गया विद्वान सत्र न्यायाधीश द्वारा कई पहलुओं पर दिया गया निर्णय टिकाऊ नहीं था। इस न्यायालय ने आगे कहा कि चूंकि सत्र न्यायाधीश द्वारा आरोपी को दोषमुक्त करते समय प्रासंगिक/भौतिक साक्ष्य को खारिज करना उचित नहीं था, इसलिए उच्च न्यायालय साक्ष्यों की फिर से सराहना करने और अपने स्वयं के निष्कर्ष को दर्ज करने का पूरी तरह से हकदार था। इस न्यायालय ने चश्मदीदों के साक्ष्यों की जांच की और राय दी कि चश्मदीदों की गवाही को खारिज करने के लिए विचारण न्यायालय द्वारा दिए गए कारण बिल्कुल भी सही नहीं थे। इस न्यायालय ने यह भी देखा कि विचारण न्यायालय द्वारा किए गए साक्ष्यों का मूल्यांकन स्पष्ट रूप से गलत था और इसलिए यह उच्च न्यायालय का कर्तव्य था कि वह विद्वान सत्र न्यायाधीश द्वारा पारित दोषमुक्त करने के आदेश में हस्तक्षेप करे।

31.3. एटली बनाम स्टेट ऑफ यूपी में एआईआर 1955 एससी 807, पैरा 5 में, इस न्यायालय ने निम्नानुसार अवलोकन किया और आयोजित किया: (एआईआर पृ. 80910) जेड

“5. अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह तर्क दिया गया है कि निचली न्यायालय का फैसला दोषमुक्ति का है, इसलिए उच्च न्यायालय को अभियोजन पक्ष की ओर से दिए गए सबूतों की सराहना के आधार पर इसे तब तक रद्द नहीं करना चाहिए था जब तक कि वह निष्कर्ष पर नहीं पहुंच जाता। कि विचारण जज का निर्णय विकृत था। हमारी राय में, यह कहना सही नहीं है कि जब तक अपीलीय न्यायालय सीआरपीसी की धारा 417 के तहत अपील में इस निष्कर्ष पर नहीं पहुंचती कि अपील के तहत दोषमुक्त करने का निर्णय विकृत था, तब तक वह उस आदेश को रद्द नहीं कर सकती थी।

इस न्यायालय द्वारा यह निर्धारित किया गया है कि दोषमुक्त करने के आदेश के खिलाफ अपील पर उच्च न्यायालय पूरे साक्ष्य की समीक्षा करने और अपने स्वयं के निष्कर्ष पर आने के लिए खुला है, निश्चित रूप से, अच्छी तरह से स्थापित नियम को ध्यान में रखते हुए कि विचारण न्यायालय द्वारा दिए गए दोषमुक्त करने के फैसले से अभियुक्तों की बेगुनाही कमजोर नहीं हुई है, बल्कि मजबूत हुई है, जिसमें गवाहों के व्यवहार को देखने का लाभ था, जिनके साक्ष्य उसकी उपस्थिति में दर्ज किए गए हैं।

यह भी अच्छी तरह से स्थापित है कि अपील की न्यायालय के पास दोषमुक्ति के आदेश के खिलाफ अपील में सबूतों की सराहना करने की उतनी ही व्यापक शक्तियाँ हैं जितनी कि दोषसिद्धि के आदेश के खिलाफ अपील के मामले में, शर्तों के अधीन जिसके साथ निर्दोषता का अनुमान लगाया जाता है। आरोपी व्यक्ति विचारण न्यायालय में शुरू होता है और अपीलीय चरण तक भी जारी रहता है और अपीलीय न्यायालय को विचारण न्यायालय की राय को उचित महत्व देना चाहिए जिसने दोषमुक्त करने का आदेश दर्ज किया था।

यदि अपीलीय न्यायालय उन सिद्धांतों को ध्यान में रखते हुए साक्ष्य की समीक्षा करती है, और विपरीत निष्कर्ष पर पहुंचती है, तो यह नहीं कहा जा सकता कि निर्णय ख़राब हो गया है। (इस संबंध में बार में उद्धृत मामलों को देखें, अर्थात् सूरजपाल सिंह बनाम राज्य एआईआर 1952 एससी 52; विलायत खान बनाम यूपी राज्य एआईआर 1953 एससी 122) हमारी राय में, उठाए गए विवाद में कोई दम नहीं है अपीलकर्ता की ओर से कहा गया कि उच्च न्यायालय द्वारा संपूर्ण साक्ष्यों की समीक्षा करना और अपने स्वयं के निष्कर्ष पर आना उचित नहीं था।

31.4. के. गोपाल रेड्डी बनाम ए.पी. राज्य (1979) 1 एससीसी 355 में, इस न्यायालय ने देखा है कि जहां विचारण न्यायालय खुद को काल्पनिक संदेहों से घिरा होने देता है, मामूली कारणों से विश्वसनीय सबूतों को खारिज कर देता है और उन सबूतों पर विचार करता

है जो लेकिन मुश्किल से ही संभव है, न्याय के हित में हस्तक्षेप करना उच्च न्यायालय का स्पष्ट कर्तव्य है, ऐसा न हो कि न्याय प्रशासन का उपहास उड़ाया जाए। (जोर दिया गया)

10. उच्च न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित निर्णय और आदेश तथा विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा पारित दोषमुक्ति के निर्णय और आदेश को पढ़ने के बाद, हमारी दृढ़ राय है कि मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में उच्च न्यायालय का निर्णय उचित है। और, इस प्रकार, विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा पारित दोषमुक्त करने के आदेश को उलटने और आरोपियों को धारा 376 और 506 आईपीसी के तहत अपराधों के लिए दोषी ठहराने में कोई त्रुटि नहीं की है। प्रथम अपीलीय न्यायालय होने के नाते और जैसा कि उपरोक्त निर्णयों में देखा गया है, उच्च न्यायालय ने रिकॉर्ड पर मौजूद सभी साक्ष्यों और विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा दिए गए तर्क की फिर से सराहना की। मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में, उच्च न्यायालय ने इस न्यायालय द्वारा यहां ऊपर उल्लिखित निर्णयों में निर्धारित कानून के मापदंडों के भीतर कार्य किया है।

11. जहां तक अपील की योग्यता का सवाल है, रिकॉर्ड पर मौजूद पूरे साक्ष्य की सराहना करते हुए, विशेष रूप से पीडब्लू 11 - डॉ. रमेश कुमार और पीडब्लू 22 - डॉ. रमा मल्होत्रा के रूप में जांच किए गए डॉक्टरों के बयान की सराहना करते हुए, उच्च न्यायालय ने विशेष रूप से कहा है पाया गया कि पीड़िता का आईक्यू 62 था जो पीड़िता के इतिहास और मानसिक स्थिति की जांच पर आधारित था। हाई न्यायालय भी इस नतीजे पर पहुंचा है कि पीड़िता यौन उत्पीड़न के अच्छे और बुरे पहलू को समझने की स्थिति में नहीं थी. केवल इसलिए कि पीड़िता कुछ घरेलू काम करने की स्थिति में थी, इस चिकित्सीय साक्ष्य को खारिज नहीं किया जा सकता कि पीड़िता हल्की मानसिक रूप से विकलांग थी और वह यौन उत्पीड़न के अच्छे और बुरे पहलू को समझने की स्थिति में नहीं थी। ऐसा प्रतीत होता है कि आरोपी ने पीड़िता की मानसिक बीमारी का फायदा उठाया। इस तथ्य के साथ इसकी सराहना की जानी आवश्यक है कि आरोपी को पीड़िता द्वारा दिए गए बच्चे का जैविक पिता पाया गया है। उपरोक्त के बावजूद अभियुक्त का मामला 313 के बयान में पूरी तरह से मुकरने का था। अभियुक्त के मामले में ऐसा कभी नहीं था कि यह सहमति का मामला था। इसलिए, रिकॉर्ड पर मौजूद सबूतों पर विचार करते हुए, विशेष रूप से पीडब्लू11 और पीडब्लू22 के बयान और यहां तक कि अभियोजन पक्ष के अन्य गवाहों के बयान पर, उच्च न्यायालय ने ठीक ही कहा है कि मामला आईपीसी की धारा 375 के तहत आएगा और आरोपी को अपराध के लिए दोषी ठहराया है। धारा 376 आईपीसी. यहां तक कि आईपीसी की धारा 375 के खंड पांचवें के अनुसार, "एक पुरुष को बलात्कार करने के लिए कहा जाता है", यदि उसकी सहमति से, ऐसी सहमति देने के समय, मानसिक रूप से अस्वस्थता के कारण, इसकी प्रकृति और परिणामों को समझने में असमर्थ है जिस पर वह सहमति देती है. जैसा कि ऊपर देखा गया है, यहां तक कि आरोपी की ओर से यह भी नहीं कहा जा सकता कि यह सहमति का मामला था। साक्ष्यों के आधार पर यह स्थापित और सिद्ध हो चुका है कि पीड़िता मानसिक रूप से विक्षिप्त थी और उसका आईक्यू 62 था और वह यौन उत्पीड़न के अच्छे और बुरे पहलू को समझने की स्थिति में नहीं थी। आरोपी ने पीड़िता की मानसिक बीमारी और कम आईक्यू का फायदा उठाया।

12. अब जहां तक आरोपी की ओर से यह निवेदन है कि पीडब्लू 11 - डॉ. रमेश कुमार और पीडब्लू 22 - डॉ. रमा मल्होत्रा के बयान में विरोधाभास हैं कि वह 'हिंदी' नहीं जानती थी और वह केवल 'फरी' जानती थी। 'और इसलिए इस तरह के विरोधाभासों को देखते हुए संदेह का लाभ आरोपी के पक्ष में जाना चाहिए, उपरोक्त पहलू को PW22 ने अपनी जिरह में समझाया है। प्रति परीक्षण में, पीडब्लू22 डॉ. रमा मल्होत्रा ने विशेष रूप से कहा है कि परीक्षणों में भाषा महत्वपूर्ण नहीं है क्योंकि ये भाषा से स्वतंत्र हैं। चिकित्सीय साक्ष्यों से यह पता चलता है कि IQ 62 'हल्की मानसिक मंदता' की श्रेणी में आता है। यह भी सामने आया है कि मानसिक स्थिति और आईक्यू का निर्धारण चोटों और गतिविधियों के आधार पर किया जाता है। किसी मरीज के सवालों, गतिविधियों और उसकी हिस्ट्री के आधार पर किसी व्यक्ति का आईक्यू जाना जा सकता है। इसलिए, भले ही पीड़ित द्वारा ज्ञात भाषा के संबंध में कुछ विरोधाभास हो सकते हैं, उस स्थिति में भी, पीड़ित की मानसिक स्थिति पर संपूर्ण चिकित्सा साक्ष्य पर अविश्वास करना प्रमुख विरोधाभास नहीं कहा जा सकता है। इसलिए, उच्च न्यायालय द्वारा आईपीसी की धारा 376 और 506 के तहत अपराध के लिए आरोपियों को दोषमुक्त करने और दोषी ठहराने के आदेश को पलटना उचित है।

13. अब जहां तक आरोपी की ओर से इस दलील का सवाल है कि वह उसे दी गई सात साल की आरआई में से चार साल की आरआई पहले ही काट चुका है और शादीशुदा है और उसके दो बच्चे हैं और इसलिए उस पर नरम रुख अपनाया जाना चाहिए,

यह आवश्यक है ध्यान देने योग्य बात यह है कि उच्च न्यायालय ने भी सात साल की सश्रम कारावास की न्यूनतम सजा देकर बहुत उदार रुख अपनाया है। यह ध्यान दिया जाना आवश्यक है कि यह एक पीड़िता पर यौन उत्पीड़न का मामला है, जिसका आईक्यू 62 था और वह मानसिक रूप से विक्षिप्त थी और आरोपी ने पीड़िता की मानसिक बीमारी/बीमारी का अनुचित फायदा उठाया है। मानसिक विकार या मानसिक बीमारी से पीड़ित व्यक्ति विशेष देखभाल, प्यार और स्नेह का पात्र है। उनका शोषण नहीं किया जाना चाहिए. वर्तमान मामले में, आरोपी ने पीड़िता की मानसिक बीमारी/बीमारी का फायदा उठाकर उसका शोषण किया है। इसलिए, आरोपी को दोषी ठहराने वाले उच्च न्यायालय द्वारा पारित फैसले और आदेश के खिलाफ इस न्यायालय के हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है।

14. उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए और यहां ऊपर बताए गए कारणों से, वर्तमान अपील विफल हो जाती है और खारिज किए जाने योग्य है और तदनुसार खारिज की जाती है।

Translated , Validated & Corrected by
SHASHWAT DUBEY
ADDITIONAL JUDGE TO THE COURT OF CIVIL JUDGE CLASS–II
BALRAMPUR–RGANJ